अल्बुकार्कि (न्यू मेक्सिको) यू.एस.ए.
सितम्बर ११, २००२

सन्देश संख्या ५०

दस नॉन कमाण्डमेन्ट्स

सन्देश संख्या–४६ में यह अनुभव किया गया कि अगला सन्देश (सन्देश सं०–५०) गीता में छिपी हुई प्रज्ञा को पाठ और ध्यान की अनवरत प्रक्रिया के द्वारा और अधिक उद्‌घाटित करेगा। गीता का मन्थन अब भी इस देह में जारी है, किन्तु जो सन्देश अब प्रकट हो रहा है वह कदाचित् बाइबिल से अधिक संबंधित है।

गत वर्ष इसी दिन यह देश एक भयंकर आतंक एवं संत्रास का शिकार हुआ था और इसलिए आज मुझे अमेरिकी मूल वासियों की शक्तिशाली ऊर्जा से युक्त संयुक्त राज्य अमेरिका के इस भाग में अद्भुत बोध हो रहा है।

दस सुझाव (नॉन कमाण्डमेन्ट्स) :

१. स्मृति और बुद्धि की सम्पूर्ण कार्य शक्ति को अक्षुण्ण रखते हुए चित्तवृत्ति और अहंकार की गतिविधियों से मुक्ति पाई जाए।

   स्मृति (संग्रहित सूचना) + इसके उपयोग की क्षमता= बुद्धि

   बुद्धि + आसक्ति (प्रदूषण) = मन

   मन + दर्प (विकृति) = अहंकार

   यह मुक्ति ही प्रज्ञा है जो कि स्मृति, बुद्धि, मन और अहंकार की सीमा से परे है।

२. मानव मात्र की अद्वितीयता, जिसमें सार्वभौमिकता भी सम्मिलित है, को समझा जाए।

३. प्रेम आकांक्षामुक्त हो। किसी बाहरी उद्धारक पर निर्भरता के बिना स्वयं के माध्यम से उद्धार प्राप्त हो।

४. देवत्व पर ध्यान हो। प्रार्थना के बहाने ईश्वर का सलाहकार न बना जाए।

५. याद रहे कि हँसी–खुशी ही पवित्र जीवन–यात्रा है। दुःख और यंत्रणा को आदर्श के रूप में महिमामंडित करना हास्यास्पद एवं पवित्र जीवन का प्रदूषण है।

६. जिन्दादिल एवं जीवन्त बनें। जीवन के लक्ष्य निर्धारित कर उसकी उपलब्धि के चक्कर में मरते न रहें।

७. बिना सोचे समझे किसी बात को स्वीकार करने, उसकी नकल एवम् अनुसरण करने के स्थान पर सर्जनात्मक स्वतंत्रता और प्रस्ङ्गुटन को प्रश्रय दिया जाए।

८. यह समझा जाए कि संवेदनशीलता और काम ऊर्जा जीवन से सम्बन्धित है, जबकि विषयासक्ति और कामुकता मन से सम्बन्धित है। जीवन पवित्र है, मन नहीं।

९. 'जो होना चाहिए' नहीं बल्कि 'जो है' उसके धर्म का अभ्यास किया जाए।

१०. सृष्टि के कलात्मक एवं विस्मययुक्त निष्कपटता को देखा जाए। इसे अपने शब्दजाल तथा दुर्बुद्धि में न बाँधा जाए।

उपर्युक्त दस सुझावों पर विचार करते हुए समस्त धर्मान्धता और उसके कारण होने वाले झगड़ों का अन्त करें। खुद जियें और दूसरों को जीने दें। स्वर्ग की अप्सराओं, पुष्पवाटिकाओं एवं प्रासादों के स्वप्न तथा परलोक में पूर्वजों से मिलन की कल्पना से मोहान्ध न हों। इस कल्पना में मानसिक छलाँग न लगायें कि स्वर्ग में ईश्वर ईसाई , मुसलमान और हिन्दू के रूप में हमारी जो उपाधियाँ और विभाजन हैं उन्हें ध्यान में रखते हुए बाइबिल, कुरान और गीता के अनुरूप किसी 'अन्तिम घड़ी' में अपने निर्णय की घोषणा करते हुए पुरस्कार और दण्ड प्रदान करता है। धर्मशास्त्रियों के विकृत एवं बुद्धि पर आधारित व्याख्याओं और कपटपूर्ण तर्कों के चक्कर में सत्य का परित्याग न करें।

सभी प्रकार के अधिकार प्रदर्शन, शोषण एवं छलयोजन (धुरफंद) की चाहत को समाप्त हो जाने दें ताकि मानसिक संतुलन के सर्वोच्च शिखर की ओर अग्रसर हो सकें। इस शिखर से करुणा और बोध, सत्य और शांति, परमानन्द और मंगल की सरिता, जो सम्पूर्ण मानवता को आहार और पोषण प्रदान कर सके, प्रवाहित होने दें। इस जीवन्त शरीररचना अर्थात् मनुष्य की ईश्वर, आत्मा और जीवात्मा के नाम पर चित्तवृत्ति के उद्दीपनों, उत्तेजनाओं, तुयिों आदि में कोई रूचि नहीं है। जीवन की तन्मात्रायें और प्रक्रियायें इन्हें मान्यता प्रदान नहीं करती हैं। अनाममय संवेदनशीलताओं (तन्मात्राओं) को ज्ञान, अनुभव के ढाँचे, सांस्कृतिक निवेश एवम् अनुबन्धन के दायरे में सिमटी कट्टर अवधारणाओं के रूप में प्रस्तुत करना वैचारिक और मानसिक प्रदूषण है। ईश्वर, आत्मा, जीवात्मा, अन्तरात्मा, स्वर्ग, नरक, शैतान, महापाप इत्यादि जैसे गुंजायमान

मुहावरों की आड़ में धर्मान्धताओं और सिद्धान्तों को उत्पन्न करने वाले विचारों, पूर्व अवधारणाओं और पूर्व निश्चित निष्कर्षों में कोई देवत्व या पवित्रता नहीं है।

पुरोहितों और राजनीतिज्ञों के नारों तथा लुभावने शब्दजालों से प्रभावित और उत्तेजित न हों। इन दोनों की मानवता को विभाजित करने तथा जीवन का विनाश करने में सदैव व्यक्त एवम् अव्यक्त सहमति रही है। उस अनाममय को किसी नाम की सीमा में नहीं बाँधा जा सकता है अर्थात् उन्हें कोई नाम नहीं दिया जा सकता है। अज्ञेय कभी ज्ञात नहीं हो सकता है।

।। शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः ।।